

विक्रम संवत्-२०३६, श्रावण सुद्ध-७, रविवार, ता. १७-८-१९८०
 वरनामृत-१८५, १९३, १९७, प्रवचन नं. १०

१८५ बोल. फिरसे थोडा लेते हैं. 'मुनिराज कहते हैं...' पद्मप्रभमलधारीदेव मुनि, उनके कलशमें है. 'चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है.' भगवान आत्मा पूर्ण गुण और शक्तिसे भरा है. 'उसके अंदर जाना...' अंतर गुण जो ज्ञान और आनंद है, जो अनंत भरा है उसमें जाना 'और आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना...' आलाला..! आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना. अंतर आनंद, ज्ञान, शांति, स्वच्छता, प्रभुता, विभुता आदि अनंत आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना, मुनिराज कहते हैं, 'वही हमारा विषय है.' मुनिराजका विषय है. क्रियाकांड कोई उनका विषय नहीं है. क्रियाकांड आ जाये, स्वतंत्र जड करे. विषय यह है. आलाला..!

'चैतन्यमें स्थिर होकर अपूर्वताकी प्राप्ति नहीं की, अवर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की, तो हमारा जो विषय है...' मुनिका विषय ध्रुव द्रव्य है. नियमसारमें कलश है. हमारा विषय तो आत्मा आनंद अण्डानंद प्रभु हमारा विषय है. समकित्तिको भी वह विषय है. लेकिन मुनिको विशेष है. 'अवर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की,...' हमारा विषय है. आलाला..! समाधि, चैतन्यमें स्थिर रहना, यह मुनिका विषय है. आलाला..! बाहरमें क्या करना वह कुछ आया नहीं. अंदर करना. लेकिन स्थिर कब हो? कि वह यीज ज्ञानमें भासित हो, ज्ञानमें ज्ञेय हो, पूरी यीज ज्ञानमें ज्ञेयरूपसे भासित हो, भासन हो, बादमें उसमें स्थिर हो सकता है. कहते हैं कि हमने प्रगट नहीं किया. वह तो व्यवहारसे बात करते हैं. है तो मुनि. अल्पपना है, अभी केवलज्ञान नहीं है, इसलिये अपनी दीनता वर्णवते हैं. है तो महामुनि. छठे-सातवें गुणस्थानमें जुलनेवाले हैं. लेकिन हमें केवलज्ञान नहीं है. वह हमारी दीनता है. आलाला..! उनकी दीनताका वर्णन करते हैं. अरे..! हमने प्रगट किया नहीं. बाहरमें उपयोग आता है.

'बाहरमें जब उपयोग आता है तब द्रव्य-गुण-पर्यायिके विचारोंमें रुकना होता है,...' क्या कहते हैं? अंतरमें तो अकेले ज्ञायकका ही अनुभव होता है. लेकिन विकल्प आया. उसमें रह सके नहीं तो द्रव्य अर्थात् त्रिकावी वस्तु, गुण अर्थात् त्रिकावी शक्ति, सत्का सत्त्व, सत् जो भगवान आत्मा, उसका सत्त्व, उसको यहां

गुण कहते हैं. आलाला..! हमें अंतरमें ध्यानमें रहना वही हमारा विषय है, लेकिन हम उसनें रह नहीं सकते, तब द्रव्य-गुण-पर्यायिके विचारमें रुकना होता है. द्रव्य अर्थात् त्रिकावी वस्तु, गुण-त्रिकावी शक्ति-स्वभाव, पर्याय-वर्तमान दशा. आलाला..! ये द्रव्य, गुण और पर्याय. द्रव्य आत्मा त्रिकावी आनंदकंड प्रभु, जिसमें गुणका भेद नहीं, पर्यायका भेद भी नहीं, अभेद वस्तु. पर्याय जिसको विषय करे, वह अभेद यीज है. पर्यायका विषय पर्याय भी नहीं है. आलाला..! पर्यायका विषय अभेद चैतन्य, वह द्रव्य. और उसमें ज्ञान, दर्शन, आनंद आदि गुण. और उसकी वर्तमान अवस्था पलटना, पलटना, पर्याय पलटती है, वह उसकी पर्याय. है तो मुनि. आचार्य नहीं है. पद्मप्रभमवधारीदेव मुनि हैं.

मुनि कहते हैं कि हमारे विषयमें हम रह सकते नहीं, स्थिर नहीं रह सकते. ठीतनी दीनता बताते हैं. विकल्प आता है तो द्रव्य-गुण-पर्यायिके रुकना पडता है. आलाला..! बाकी रहना तो अंदरमें रहना वह वस्तु है. हमारा विषय तो अंदरमें आनंदमें स्थिर होना (वह है). ज्ञायक आनंद जैसा जो दृष्टिमें लिया है, आलाला..! सम्यग्दर्शनमें जो ज्ञायक और आनंद अतीन्द्रिय जो दृष्टिमें लिया है और अनुभवमें लिया है, हमें तो वही रहना, वही हमारा विषय है. आलाला..! है तो मलामुनि. अल्प कालमें मेरे हिसाबसे तो तीर्थकर होंगे. त्विष्यमें. जैसी कथनशैली अंदरमें है. है मुनि, आचार्य नहीं है. लेकिन कहते हैं, उपयोग जब बाहरमें जाता है तब द्रव्य, गुण, पर्यायिके (लगता है). लेकिन बाहरमें उपयोग जाये तब यह (होता है). अपना द्रव्य, गुण, पर्याय तीनमें. आलाला..! वह भी विकल्प है, राग है. अपना द्रव्य त्रिकावी, ज्ञान और आनंद आदि वर्तमान गुण त्रिकावी और वर्तमान उसकी अवस्था-निर्मल शांत वीतरागी. ठीन तीनोंका विचार आता है तो विकल्प आता है. आलाला..! यह नियमसारमें गाथा है. नियमसारमें गाथा है. द्रव्य, गुण, पर्याय तीनका अेक द्रव्यमें विचार करे वह विकल्प है. यहां है? नियमसार. १४५ गाथा. उन्हें याद रह गयी है.

‘यहां भी अन्यवशका स्वरूप कहा है. भगवान अहंतके मुभारविंदसे निकले लुअे (-कहे गये) मूल और उत्तर पदार्थोंका सार्थ (-अर्थ सहित) प्रतिपादन करनेमें समर्थ जैसा जो कोई द्रव्यविंगधारी (मुनि) कभी छल द्रव्योंमें चित्त लगाता है,...’ आलाला..! पाठमें है. ‘द्व्यगुणपञ्जयाणं चित्त जो कुणइ सो वि अण्णवसो’. वह पराधीन है. आलाला..! १४५ गाथा है. ‘द्व्यगुणपर्यायाणां’. द्रव्य अर्थात् त्रिकावी भगवान ज्ञायकप्रभु और गुण अर्थात् आनंद और ज्ञान उसका गुण और वर्तमान

उसकी आनंद और शांतिकी पर्यायि. जैसे तीन भेदका विचार करनेसे राग और विकल्प उत्पन्न होता है. आलाला..! अपने द्रव्य, गुण, पर्यायि तीन, हां! बाहरके द्रव्य, गुण, पर्यायिके विचार करना तो विकल्प है ही. अपने सिवा तीर्थकरकी ओर लक्ष्य जाय तो भी शुभराग है. तीन लोकके नाथ पर दृष्टि जाये तो भी शुभराग (है). ये तो अपनेमें द्रव्य-गुण-पर्यायिका तीन भेद करते हैं. आलाला..!

‘द्वगुणपञ्जयाणं’ द्रव्य अर्थात् त्रिकावी ज्ञायकभाव. गुण अर्थात् अनंत ज्ञान, दर्शन, शांति, स्वच्छता इत्यादि. पर्यायि (अर्थात्) अेक गुणकी वर्तमान दशा. पर्यायि पलटती अवस्था. अेकमें तीनका विचार करता है तो हम परवश है. हम परवश हैं. आलाला..! भेद ईर. अपना द्रव्य, गुण, पर्यायि तीनका विचार करनेसे भी राग (होता है). आवश्यक नहीं है. आवश्यकका अधिकार है. वह आवश्यक नहीं. अधिकार आवश्यक है. वह अनावश्यक है. आलाला..! दूसरेमें आ गया है. आगे क्लेशमें. हमारा विषय तो अभेद ज्ञायक ही है. उसमें है. हम ज्ञायकमें रह सके नहीं, वह हमारा विषय छोडकर अपने द्रव्य-गुण-पर्यायिमें आता है, अपना द्रव्य, त्रिकावी पर्यायि और ज्ञानपर्यायि, इन तीनका विचार आता है तो प्रभु! परवश हैं. अनवश है, पाठ. परवश है, आवश्यक नहीं. उसकी जरूरतवावी किया नहीं. आलाला..! धन्नावावञ्च! आलाला..!

मुनिराज ऐसा कहते हैं. कल तीन बोल रहे थे न? उसमें वहां मुनिकी बात है. मुनिकी बात समकितिकी बातसे ज्यादा.. मुनिराज ऐसा कहते हैं. आलाला..! पञ्चप्रभमलधारीदेव टीकाकार. नियमसारके टीकाकार ऐसा कहते हैं कि हम अपने ज्ञायकमें.. हमारा विषय तो यही है. अंदर आनंदमें रहना, ज्ञायक ध्रुवमें. लेकिन उसमें रह नहीं सके तो द्रव्य, गुण, पर्यायिका विचार आता है तो वह विकल्प अनावश्यक है. आवश्यक नहीं है. आलाला..! गजब बात है! तीर्थकरदेव वीतराग परमात्माकी चरमसीमाकी यह हद है. आलाला..!

अरे..! द्रव्य में हूं, वह भी विकल्प लिया है. १४२ गाथामें. मैं ज्ञायक हूं, ऐसा भी विकल्प उठाता है, वह भी पराधीन है. आलाला..! अपना स्वरूप ज्ञायक उसमें रहना और बाहर निकले तो उपयोगका द्रव्य, गुण, पर्यायिमें रुकना होता है. अरे..रे..! हमारी दशा अंदर नरम दशा है. आलाला..! हमारी दशा उग्र नहीं है. आलाला..! मुनिराज कहते हैं. हमारी दशा निर्मल नहीं है. हमारा द्रव्य, गुण, पर्यायिके विचारमें रुकना होता है. आलाला..!

‘किंतु वास्तवमें वह हमारा विषय नहीं है.’ है? आलाला..! गजब बात है!

दुनिया कुछ मानती है, वस्तु कहीं दूर रह गयी. चंद्रभाई! द्रव्य, गुण, पर्याय हमारा विषय नहीं है. आलाला..! गजब है! वीतरागमार्गकी पराकाष्ठा. मुनिराज नरमीसे अपनी दीनता पर्यायमें बताते हैं. अरे..रे..! हम ज्ञायकमें रह सकते नहीं. केवली परमात्मा ज्ञायकमें साद्विअनंत रहे. केवली परमात्मा साद्विअनंत रहे, हम अंतर्मुलूतकि सिवा ज्ञायकमें रह सकते नहीं. और बाहर निकलते हैं तो द्रव्य, गुण, पर्याय तीनका विचार आता है. विचार भी यह आता है. वह भी परवश है, अनावश्यक है. आलाला..! आवश्यकका अधिकार है. आलाला..! गजब बात है! फिरसे लिया. आलाला..!

अंतर चैतन्यप्रभु अकेले ज्ञायकमें ध्यानमें आनंदमें रहना, अतीन्द्रिय आनंदके वेदनमें रहना वह हमारा विषय है. उस आनंदमेंसे निकलकर, आनंद तो रहता है, लेकिन निकलकर आये तो द्रव्य, गुण, पर्यायका, अपनी अेक शीजमें तीन भेद करके रुकना पडता है हमको. आलाला..! अरे..रे..! एह बात है, प्रभु! तेरी. तेरी बात है, नाथ! तू ऐसा है, प्रभु! अंदर स्वप्नमेंसे निकलकर रागमें रुकना, प्रभु! तेरा विषय नहीं. आलाला..! आलाला..!

मुमुक्षु :- यह स्पष्टीकरण तो आपने किया.

उत्तर :- वस्तु ऐसी है. बलिनकी तो मला अनुभवदशा है. उनकी तो बहुत तीव्र दशा है. सहज भाषा आ गयी है. ये तो बलनोंने विभ लिया, नहीं तो उनको तो कुछ पडी नहीं है. कौन विभता है, यह मावूम नहीं पडा. आला..!

मुनिराज कहते हैं, मुनिपना आया, तीन कषायका अभाव. आलाला..! और क्षण-क्षणमें छठे-सातवें, छठे-सातवेंमें जाते हैं. अंतर्मुलूतमें.. षट्पंडागममें विभा है, लेकिन वह आभिरका अंतर्मुलूत लिया है. मोक्षका. शब्द ऐसा पाठ है, आभिरके अंतर्मुलूतमें छठा-सातवा एगार बार आता है. एगारों बार आता है, ऐसा पाठ है. आलाला..!

यहां कहते हैं कि, अरे..रे..! प्रभु! हम हमारे विषयमें रह सकते नहीं. आलाला..! धन्य काल! धन्य अवसर! हमारा विषय तो अकेला ज्ञायक है. वहां हमारा धाम, हमारा स्थान, हमारा क्षेत्र, हमारा स्थान, हमारी संपदाकी ऋद्धि वह है. ज्ञायकपनेमें आनंदद्वि संपदा पडी है वह हमारी संपदा है. वहां हमे निर्विकल्पपने रुकना वह हमारी संपदा है. आलाला..! अरे.. प्रभु! मैं वहां रह सकता नहीं. आलाला..! लेकिन द्रव्य, गुण, पर्यायके विचारमें रुकना पडता है. रुकना पडता है, हां! त्रिकावी ज्ञायक, उसमें आनंदद्वि गुण, उसकी आनंद आद्वि दशा, ये तीन बोलका विचार

भी पराधीन और अनावश्यक है. अनावश्यक नाम आवश्यक नहीं. आलाला..! गजब बात है. आलाला..! अपनी दीनता, मुनि अपनी पामरता बताते हैं. तो साधारण प्राणी.. आलाला..! साधारण ज्ञान और साधारण श्रद्धामें मान ले कि हम... आलाला..! प्रभु! सूक्ष्म बात है, प्रभु! आलाला..!

ऐसा कहते हैं, अरेरे..! हमारा जब उपयोग बाहर आता है, हमने जबतक पूर्ण दशा प्रगट नहीं की, आलाला..! उपयोग बाहर आता है तब द्रव्य, गुण, पर्यायिके विचारमें रुकना होता है. 'किंतु वास्तवमें वह हमारा विषय नहीं है.' आलाला..! अपना अेकड़प स्वभावके सिवा, अपनेमें तीन प्रकार भी हमारा विषय नहीं है. प्रभु! उसकी बात यहां है नहीं, प्रभु! तेरी बात है. प्रभु अेकड़प बिराजमान अंदर, उसका अेकड़पका ध्यान छोडकर... आलाला..! अपने द्रव्य, गुण, पर्यायिके भेदका विचार करना.. पंडितजी! भेदको व्यवहारनय कला. गजब किया है! ओलो..! प्रभु! मैं विकल्पमें आ गया. अरे..! हमारी चीज तो अंदर रह गई. है उघाड, वस्तु कहीं नहीं चली गयी. लेकिन आगे बढ़ते नहीं और अंदर रुके नहीं और बाहर आ गये. आनंद तो है, समकित है, शांति है. आलाला..! लेकिन केवलज्ञानके आगे अल्पता है. उस अपेक्षासे कहते हैं कि अरेरे..! हमारा वह विषय नहीं. आलाला..! यह मुनिपनेकी व्याख्या. मुनिपना. आलाला..! गजब बात है, आपू! पंच मलाप्रत और इवना, ठिकना वह विषय तो है नहीं. यह तो अेक द्रव्यमें तीनका विचार करना, वह विषय नहीं. अेक अपना द्रव्य, हां! परका नहीं. परका तो चाहे कोई भी, तीन लोकके नाथ उनका ज्ञायक, वे ज्ञायक है, ऐसा विचार आता है तो भी विकल्प है. आलाला..! वह अनावश्यक है. आलाला..!

यहां कहते हैं, 'वह हमारा विषय नहीं है. आत्मामें नवीनताओंका भंडार है.' क्या कहते हैं? अरेरे..! आत्मामें तो हम नवीनताका भंडार देखते हैं. फिर भी बाहर विकल्प आ जाता है. अंदर छेमें आते हैं न? छे गुणस्थानमें विकल्प आ जाता है. सातवेमें स्थिर हो जाते हैं. उसकी बात करते हैं. कहते हैं, हमें छेमें विकल्प आता है तो द्रव्य, गुण, पर्यायिके विचारमें रुकना पडता है. आलाला..! 'आत्मामें नवीनताओंका भंडार है.' आत्माका नवीनताका भंडार है. प्रभु! उस चैतन्य यमत्कार क्या कहना! छन्नस्थ पूरा पार नहीं प्राप्त करता. केवलज्ञान हो तब प्राप्त कर सकता है, उस पूर्ण भंडार भगवानका. आलाला..! ऐसा भंडार अंदर पडा है.

कहते हैं कि 'आत्मामें नवीनताओंका भंडार है.' अनंत कालमें नहीं प्रगट हुआ ऐसी नवीनताका भंडार है. ऐसा ज्ञान, आनंद, शांति, वीतरागता, स्वच्छता..

ओहोहो..! उसका प्रमाण और उसका नयका विषय, ये कोई अवैकिक भंडार है. आलाला..! अरे.. प्रभू! तू कहां है और कहां मान रहा है. यहां तो मुनिराज यहां तक आये हैं, फिर भी कहते हैं, अरे..रे..! हमें विकल्पमें आना पड़ता है, हमारा विषय नहीं है. अरे..!

‘भेदज्ञानके अभ्यास द्वारा यहि वह नवीनता-अपूर्वता प्रगट नहीं की,...’ क्या कहते हैं? प्रगट तो है, लेकिन ऐसी विशेष नवीनता प्रगट नहीं की जबतक.. आलाला..! ‘भेदज्ञानके अभ्यास द्वारा यहि वह नवीनता-अपूर्वता प्रगट नहीं की,...’ समय समयमें नवीन अपूर्वता, चैतन्य यमत्कारकी संपदाकी ऋद्धि, नयी-नयी अेक समयमें आनी चालिये. आलाला..! मुनिराज उसे कहते हैं. आलाला..! ‘भेदज्ञानके अभ्यास द्वारा यहि वह नवीनता-अपूर्वता...’ पूर्वमें अेक समय नहीं हुआ. ऐसी नवीनता समय-समयमें अपूर्वता प्रगट होती है वह, ‘भेदज्ञानके अभ्यास द्वारा यहि वह नवीनता-अपूर्वता प्रगट नहीं की,...’ आलाला..! क्या नम्रता!! क्या नरमाई. ओहोहो..! आला..!

मुनिराज अंदरमें उतरते हैं. विकल्प आ जाता है. अपनेमें तीन भेदका. द्रव्य, गुण और पर्याय. तीन भेदका विकल्प है वह दुःख है. आवश्यक नहीं. वह जरूरतकी चीज नहीं है. आलाला..! वह अनावश्यक चीज है. आलाला..! ये तो प्रभु, कहीं न कहीं रुककर मान लेता है, प्रभु! उसका इव तुझे मिलेगा. जैसा परिणाम है वैसा इव मिलेगा. ऐसी मुनिदशा, वह भी कहते हैं, हमें भेदज्ञान द्वारा, अभी भी राग संभवलनका उदय है, तो उसका भी भेदज्ञान द्वारा ‘अपूर्वता प्रगट नहीं की...’ समय समयमें यमत्कार, यह चेतन भगवान यमत्कारिक. उसका यमत्कार समय-समयमें यहि नवीन अपूर्व प्रगट नहीं किया, तो ‘मुनिपनेमें जे करना था वह हमने नहीं किया.’ आलाला..! गजब है! मुनिपनेमें जे करना था वह हमने नहीं किया. मुनिओंको यह करना था. वो. यह नहीं पढा था. अंतिम चार पंक्ति कल नहीं पढी थी. अब, १८३.

सम्यग्दृष्टि जेव ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही अपनेमें धारण कर रजता है, टिकाये रजता है, स्थिर रजता है-ऐसी सहज दशा होती है.

सम्यग्दृष्टि जेवको तथा मुनिको भेदज्ञानकी परिणति तो चलती ही रहती है. सम्यग्दृष्टि गृहस्थको उसकी दशाके अनुसार उपयोग अंतरमें जाता है और बाहर आता है; मुनिराजको तो उपयोग अति शीघ्रतासे

जारंभार अंतरमें उतर जाता है. भेदज्ञानकी परिणति-ज्ञातृत्वधारा-
दोनोंको चलती ही रहती है. उन्हें भेदज्ञान हुआ तबसे कोई काल पुरुषार्थ
रहित नहीं होता. अपिरत सम्यग्दृष्टिको चौथे गुणस्थानके अनुसार
पुरुषार्थ वर्तता रहता है. पुरुषार्थके बिना कहीं परिणति स्थिर नहीं रहती.
सहज भी है, पुरुषार्थ भी है. १८३.

१८३. 'सम्यग्दृष्टि जव ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही अपनेमें धारण कर रभता है,...' चौथे गुणस्थानमें समकित्ती आत्मा आनंद अनुभववी, सम्यग्दृष्टि जवको... आलाला..! 'ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही अपनेमें धारण कर रभता है,...' मूल यीज तो यह है. सम्यग्दृष्टि चौथा गुणस्थान. पांचवेमें तो विशेष निर्मलता है, छठेकी निर्मलताकी तो क्या बात करनी! मुनिराज पंच परमेष्ठी. वे भी ऐसी पुकार करते हैं. आलाला..! दूसरे प्राणीको साधारणमें अभिमान आ ज्ञये कि हम करते हैं, हमने ऐसा किया. क्या किया? प्रभु! केवलज्ञान किया तो भी कुछ नहीं किया. क्योंकि वह तो स्वभाव है वैसा प्रगट होता है. नवीन क्या किया? केवलज्ञान भी स्वभाव है. उसका स्वरूप ही है. उसका सत्का सत्त्व, सत्त्व. प्रभु आत्मा सत् है उसका सत्त्व. ज्ञान, आनंद, केवलज्ञान उसका सत्त्व है. सत्त्व उसका प्रगट होता है, वह कोई नवीनता नहीं. आलाला..! पत्रावावज! यहां कहीं सुनने मिले ऐसा नहीं है, जहां-तहां भटकते हैं. आला..! ओलोलो..!

यह बलिनके वचन उस वक्त थोड़े निकले थे. मुर्दा, मानो मुर्दा. समकित्तीको या मुनिको अक प्रकारका उदय नहीं होता. वह चिह्नी है, मोक्षमार्ग प्रकाशकमें. सबको अक ही प्रकारका उदय हो, और समान दशा उदयकी हो, ऐसा नहीं है. सम्यग्दृष्टि होने पर भी उदयमें इर्क होता है. मोक्षमार्ग प्रकाशकमें है. है यहां मोक्षमार्ग प्रकाशक? चिह्नीमें है. बनारसीदास. आलाला..!

यहां कहते हैं कि, 'ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही...' भाषा क्या है? ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही. कोई भेद द्वारा, विकल्प द्वारा नहीं. आलाला..! ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही.

मुमुक्षु :- ज्ञायक यानी पर्याय?

उत्तर :- पर्यायमें लक्ष्य ज्ञायक पर है. ज्ञायकको ज्ञायकमें. पर्याय लेकिन ज्ञायकको ज्ञायकमें रहना. जैसे. पर्यायमें भी ज्ञायकको ज्ञायकमें रहना. आलाला..! 'ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही...' वह ज्ञायक द्वारा है तो पर्याय भले. लेकिन ज्ञायक द्वारा अंदरमें

रहना. राग द्वारा नहीं, पर्यायिके लक्ष्य द्वारा नहीं. पर्यायिके लक्ष्य द्वारा नहीं, राग द्वारा नहीं, निमित्त द्वारा नहीं. आलाला..!

मुमुक्षु :- उदयभाव..

उत्तर :- .. डेवलीकी भी उदयिकभावोंकी नाना प्रकारता ज्ञानना. यानी सब धर्माश्रवको उदय समान होता है, ऐसा नहीं है. भावमें अंदर भले चौथा, पांचवा, छठा आदि हो, परंतु उदयमें डेरकार है. ऐसा है इसमें. आलाला..!

‘सम्यग्दृष्टि श्रव ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही...’ भले पर्याय ज्ञायक द्वारा ही काम लेती है. क्योंकि परिणामन तो पर्यायमें है. ज्ञायकमें परिणामन नहीं है. लेकिन परिणामनमें ज्ञायक पर दृष्टि है तो ज्ञायक पर ही पर्याय रचना. आलाला..! ये तो रात्रिमें बहिन बोले लोंगे. आलाला..! समझमें आया? भाव्य हो उसे भिले ऐसा है. ऐसी बात है. मूल मार्ग सुनना, जैनका यह मार्ग है. मूल तो उसमें यह है. ‘करी वृत्ति अण्ड सन्मुज, मूण मार्ग सांभणो जैननो रे.. करी वृत्ति अण्ड सन्मुज.’ सन्मुज करके सुनो. श्रीमद् तो अकावतारी हो गये. अक भव करके मोक्ष ज्ञयेंगे. निश्चित है, उसमें कोई डेरकार नहीं है. वैमानिकमें है वर्तमान. आलाला..!

यहां कहते हैं, ‘सम्यग्दृष्टि श्रव ज्ञायकको...’ द्रव्य, द्रव्य. द्रव्य द्वारा ही. है? भले पर्याय कार्य करती है. लेकिन पर्यायिको द्रव्य द्वारा द्रव्यमें रहना. द्रव्य द्वारा द्रव्यमें रहना, ऐसा पर्याय करती है. आलाला..! ऐसी बात सूक्ष्म पडे इसलिये लोग कहे कि निश्चय है, यहां तो निश्चय है, अकांत है, व्यवहारकी बात नहीं है. प्रभु! ये सब व्यवहार नहीं है तो क्या है? बोलना, कलना, भाग करना, अक वस्तुमें भेद करके कलना वह सब व्यवहार है. व्यवहार है वह आदरणीय नहीं. व्यवहार है नहीं ऐसा नहीं. आलाला..!

यहां कहते हैं, पाठ कैसा है? ‘ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही...’ ऐसा शब्द पडा है. ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही. पर्यायमें ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही ध्यानमें लेना. आलाला..! ‘अपनेमें धारण कर रभता है,...’ आलाला..! शब्द बहुत जिया आ गया है. ‘सम्यग्दृष्टि श्रव ज्ञायकको...’ द्रव्य द्रव्य ज्ञायक. त्रिकाव भगवान. सनातन सत्य जगतकी चीज महाप्रभु, सतका सत्त्व. ऐसा जो उसका गुण, गुणसे कलो तो ज्ञायकभाव कलनेमें आता है. नहीं तो है तो पारिणामिकभाव. लेकिन पारिणामिकभाव तो परमाणुमें भी है और धर्मास्तिमें भी है. इसलिये यहां ज्ञायकभाव कहते हैं. बाकी है तो वह पारिणामिकभाव. त्रिकावी पारिणामिकभावको पारिणामिकभाव द्वारा ही. आलाला..!

‘ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा ही...’ ‘ही’ है. ‘अपनेमें धारण कर रभता है,...’ अपनेमें

धारण कर रभता है. आह्ला..! सम्यञ्छि जव. आह्ला..! 'टिकाये रभता है,...' ज्ञायकको ज्ञायक द्वारा.. आह्ला..! अपनेमें 'टिकाये रभता है,...' अपनेमें टिकते हैं. आनंदस्वरूप भगवान त्रिकाव, ध्रुव आनंद, हां! आह्ला..! उसमें टिकता है तब तो पर्यायमें आनंद आया. टिकता है तब तो पर्यायमें आनंद आया. आह्ला..! 'स्थिर रभता है...' अपनेमें स्थिर रहता है. ज्ञायक द्वारा ज्ञायक स्थिर रहता है. आह्ला..! यह बात कठिन लगे लोगोंको. भाई! वस्तु स्वरूप तो ऐसा है. आह्ला..! 'ऐसी सहज दशा होती है.' ऐसी दशा करनी पडती नहीं. ऐसी सहज दशा होती है. आह्ला..! सहज दशा हो गई है ऐसी, बस.

'सम्यञ्छि जवको तथा मुनिको भेदज्ञानकी परिणति तो चलती ही रहती है.' भेदज्ञान तो पहले हुआ है. क्षण क्षणमें स्वभाव सन्भुजता चलती है तो पुरुषार्थ तो स्वभावकी ओर चलता ही है. क्या कदा समझमें आया? 'सम्यञ्छि जवको तथा मुनिको भेदज्ञानकी परिणति तो चलती ही रहती है.' आह्ला..! अंतरमें आनंदकी ओर झुकना तो होता ही है. आह्ला..! ये तो उसकी दशा है. आह्ला..! 'सम्यञ्छि गृहस्थको उसकी दशाके अनुसार उपयोग अंतरमें जाता है...' गृहस्थाश्रममें हो, पंचम गुणस्थानमें गृहस्थाश्रमी जव, 'सम्यञ्छिको उसकी दशाके अनुसार...' उसकी दशाके अनुसार 'उपयोग अंतरमें जाता है...' छठे मुनिको उपयोग अंतरमें जाता है वैसा नहीं जाता. मुनिको जैसे उपयोग अकदम अंदरमें जाता है, क्षणमें सप्तम और क्षणमें छठा, जैसे पंचम गुणस्थानवालेको नहीं आता. थोड़ी देर भी लगती है, कोई बार. कोई बार अंतर्मुहूर्तमें निर्विकल्प ध्यान आ जाता है, कोई बार महिनके बाद आता है. मुनिकी दशा जैसी नहीं है इसलिये ऐसा कहते हैं. इसलिये 'सम्यञ्छि गृहस्थको उसकी दशाके अनुसार उपयोग अंतरमें जाता है और बाहर आता है;...' विकल्प आता है फिरसे. कोई बार अंतर ध्यानमें लग जाये.. आह्ला..! बाहर आते हैं तब विकल्प आता है.

'मुनिराजको तो उपयोग अति शीघ्रतासे बारंबार अंतरमें उतर जाता है.' देभो! गृहस्थसे मुनिराज सख्ये भावविंगी जो होते हैं,.. आह्ला..! उनको तो अति शीघ्रतासे, छठेमें आते हैं, लेकिन अति शीघ्रतासे सातवेमें चले जाते हैं. पौन सेकंडके अंदर छठेमें रहकर सातवेमें चले जाते हैं. आह्ला..! ऐसी दशा है. मुनिपना किसको कहे! आह्ला..! वस्तु स्वरूप वीतराग परमात्मा त्रिलोकनाथका पंथ कोई अवग है. 'मुनिराजको तो उपयोग अति शीघ्रतासे बारंबार...' छठे-सातवेमें उतर जाता है. छठेसे सातवेमें अकदम जाते हैं. ध्यान करते समय भी जाते हैं और न करे तो

भी छठेमेंसे सातवेमें अेकदम जाते हैं.

‘भेदज्ञानकी परिश्रुति-ज्ञातृत्वधारा-दोनोको यवती ही रहती है.’ गृहस्थ हो या मुनि हो. समकित्तिको भेदज्ञानकी परिश्रुति यानी ज्ञातृधारा यानी ज्ञाता-दृष्टाकी धारा... आलाला..! ‘दोनोको यवती ही रहती है.’ दोनोको सदा यवती रहती है. आलाला..! हो ओव लिये. भेदज्ञानकी परिश्रुति अर्थात् ज्ञातृदृशा, ज्ञाताकी अवस्था. भगवान ज्ञाता पकड लिया, अनुभव लिया है. तो समकित्तिको ज्ञाताकी धारा सदा यवती ही है. ‘दोनोको यवती ही रहती है.’ यवती ही रहती है. आलाला..! सूक्ष्म बात है लेकिन मार्ग तो यह है. दुनियाने चाले जैसी कल्पना की हो. आलाला..! बाहरसे चाले जैसे माने, मनाये. तीन लोकके नाथ परमात्माका विरह है.

मुनिराजने प्रश्न किया था, मुनि नहीं, क्षुब्धक. मनोहरवालज्ज. मनोहरवालज्जने अेक बार प्रश्न किया. वहां जयपुरमें आये थे. उदेशिकका आपसे जुवासा हो कि गृहस्थ साधुके लिये बनाते हैं उसमें उसका क्या? करता नहीं, कराता नहीं, उसमें क्या है? उसमें कोण हरकत नहीं है. ऐसी अेक बात बाहर रओ. मैंने कला, प्रभु! प्रभुका विरह है. प्रभुके बाद ऐसी बात चले नहीं, नाथ! हम तो, क्षुब्धक भी उसके लिये लेता है तो हम तो क्षुब्धक भी नहीं मानते हैं. उसके लिये बनाया हुआ आहार लेता है, हम तो उसे क्षुब्धक भी नहीं मानते. भगवानके विरहमें जैसे गप लगाना कि गृहस्थ उसके लिये करता है तो उसमें क्या है? लेनेवाला तो करता नहीं, कराता नहीं. लेकिन लेना है वही अनुमोदन है. आलाला..! भगवानके विरहमें दूसरी बात करना..? प्रभु! परमात्मा विराजते हैं मलाविदेहमें. यहां प्रभु है नहीं. उन्होंने जो यह कला है, उससे विद्भ्र प्रभुके विरहमें नहीं कह सकते. जिसके लिये उदेशिक किया है वह वे उसमें अनुमोदन कोटि टूटती है.

यह तो हमारे (संवत) १८६८के सालकी बात है. १८६८. ७० के पहले ६८. ६७ साल हुआ. उस वक्तसे यह प्रश्न है. गुरुको मैंने प्रश्न किया था. १८६८की साल. ७०से पहले. साधुके लिये मकान बनावे तो उसकी कौन-सी कोटि टूटती है? प्रभु! नौ कोटिमें कौन-सी कोटि टूटे? मलाराज! ऐसा प्रश्न किया था. अभी दीक्षा नहीं ली थी. पहले प्रश्न किया था. राणपुरमें. गुरु लद्विक थे. उसे ऐसा लगा कि यह दीक्षा लेनेकी तैयारीमें है, उसे ऐसा...? (उन्होंने कला), जुशावभाण तुम्हारे ओडे भाण तुम्हारे लिये मकान बनाया हो, तुम उपयोग करो तो उसमें क्या है? धनको अभी कुछ नहीं कहना. उपयोग करे वही अनुमोदन है. नौ कोटिमें अनुमोदन टूटता है तो नौवां कोटि टूट जाती है. मन, वचन और काया. करना, कराना और

अनुमोदन. नौ कोटिमेंसे एक टोटि उसकी सब कोटि टूट जाती है. १९६९की सालमें हुआ था. आलाला..! बहुत चर्चा हुई थी. हमें तो अंदरसे बात आती थी. अंदरसे बहुत प्रश्न चलते थे. हमने कहा, हम जैसे नहीं मानते, बैया! जिसके लिये किया वह वे तो उसमें कोटि टूटी. नौ कोटि टूटी. वह साधु नहीं है. मकान उसके लिये बनाया, मकानका उपयोग करे या आहार (वे), वह साधु नहीं. १९६९की साल. दीक्षा १९७०में हुई.

यहां बहिन कहती है, आलाला..! 'भेदज्ञानकी परिणति-ज्ञातृत्वधारा-' एक ही बात है. वाहन की है न? वाहनका अर्थ भेदज्ञानकी परिणति यानी. वाहनका अर्थ वह है. ज्ञातृधारा-ज्ञाता-दृष्टा. अंतरमें जो ज्ञाता-दृष्टाकी धारा चलती है, भले कषायमें दो और तीन कषाय हो, लेकिन ज्ञातृधारा 'दोनोंके चलती ही रहती है. उन्हें भेदज्ञान प्रगट हुआ...' आलाला..! गृहस्थको और मुनिको 'जबसे भेदज्ञान प्रगट हुआ तबसे कोई काव पुरुषार्थ नहीं होता.' आलाला..! अपना वीर्य स्वरूप सन्मुख हमेशा चलता ही है. वह सलज चलता है. सम्यग्दर्शन हुआ तो पुरुषार्थ-वीर्य स्वभाव सन्मुख सलज चलता ही है. मैं करूं, ऐसा भी वहां नहीं है. उस ओर चलता ही है. आलाला..! है? 'उन्हें भेदज्ञान प्रगट हुआ तबसे कोई काव पुरुषार्थ नहीं होता.' अंतर्मुखमें जो पुरुषार्थकी गति चलती है, उसमें कभी विरल होता नहीं.

'अविरत सम्यग्दृष्टिको यौथे गुणस्थानके अनुसार...' स्वभावकी ओर पुरुषार्थ चलता है. 'और मुनिको छठे-सातवें गुणस्थानके अनुसार पुरुषार्थ वर्तता रहता है.' आलाला..! सलज दशा हो गई है. सम्यग्दृष्टिकी भी सलज दशा है, मुनिकी भी सलज वस्तुकी स्थिति है ऐसी दशा हो गई है. वस्तुकी जैसी स्थिति है, ऐसी पर्याय भले अल्प हुई, लेकिन ऐसी दशा हो गई है. आलाला..! 'अविरत सम्यग्दृष्टिको यौथे गुणस्थानके अनुसार और मुनिको छठे-सातवें गुणस्थानके अनुसार पुरुषार्थ वर्तता रहता है. पुरुषार्थके बिना कहीं परिणति स्थिर नहीं रहती.' आलाला..! ध्रुवके ध्येयके ध्यानके पुरुषार्थ बिना एक समय भी समकितिकी भिन्न नहीं रहता. ध्रुवका ध्यान, ध्रुव ध्येय, उसको ध्येय बनाया वह ध्येय कभी हटता नहीं. 'पुरुषार्थके बिना कहीं परिणति स्थिर नहीं रहती. सलज भी है,...' वस्तु जो प्रगट हुई वह सलज भी है 'और पुरुषार्थ भी है.' दोनों है. स्वभाविक भी है और पुरुषार्थ स्वकी ओर जुकता है, ऐसी दोनों धारा है. आलाला..! ऐसी बातें हैं. ऐसा कैसा यह उपदेश? वीतरागका उपदेश है, प्रभु! १९३.

यौथेमें और छठेमें सलज पुरुषार्थ भी होता है और पुरुषार्थ भी करते हैं.

स्वाभाविक दशा तो लो गर्थ है. स्वाभाविक दशा जो लो गर्थ है, अब उतना पुरुषार्थ नहीं करना पड़ता, वल दशा तो लो गर्थ. अब विशेष दशा लोनेमें पुरुषार्थ स्वभावकी ओर चलता है. आलाला..! समझमें आया? दोनोंमें क्या अंतर है? जो दशा अंदरसे भीली है, यौथे या पांचवेमें अंदर सम्यक् अनुभव, आनंदका अनुभव आया, वल सलज भी है और पुरुषार्थ भी है. साथमें वीर्य भी काम करता है. आलाला..! असा मार्ग है. इर कौन-सा है? १८७. किसीने विभा है. ओलो..! बहुत बडा है.

प्रज्ञाछैनीको शुभाशुभ भाव और ज्ञानकी सूक्ष्म अंतःसंधिमें पटकना. उपयोगको बराबर सूक्ष्म करके उन दोनोंकी संधिमें सावधान होकर उसका प्रहार करना. सावधान होकर अर्थात् बराबर सूक्ष्म उपयोग करके, बराबर लक्षण द्वारा पहचानकर.

अलकके पत कितने पतले होते हैं, किंतु उन्हें बराबर सावधानीपूर्वक अलग किया जाता है, उसी प्रकार सूक्ष्म उपयोग करके स्वभाव-विभावके भीय प्रज्ञा द्वारा लेद कर. जिस क्षण विभावभाव वर्तता है उसी समय ज्ञातृत्वधारा द्वारा स्वभावको भिन्न जान ले. भिन्न ही है परंतु तुजे नहीं भासता. विभाव और ज्ञायक हैं तो भिन्न-भिन्न ही;-जैसे पाषाण और सोना अकमेक दिजने पर भी भिन्न ही हैं तदनुसार.

प्रश्न :- सोना तो चमकता है इसलिये पत्थर और सोना-दोनों भिन्न ज्ञात होते हैं, परंतु यह कैसे भिन्न ज्ञात हो?

उत्तर :- यह ज्ञान भी चमकता ही है न? विभावभाव नहीं चमकते किंतु सर्पत्र ज्ञान ही चमकता है-ज्ञात होता है. ज्ञानकी चमक यारों ओर ईल रही है. ज्ञानकी चमक बिना सोनेकी चमक काहेमें ज्ञात होगी?

जैसे सखे मोती और जोटे मोती ईकटूठे हों तो मोतीका पारधी उसमेंसे सखे मोतियोंको अलग कर लेता है, उसी प्रकार आत्माको 'प्रज्ञासे ग्रहण करना'. जो जाननेवाला है सो मैं, जो देजनेवाला है सो मैं-ईस प्रकार उपयोग सूक्ष्म करके आत्माको और विभावको पृथक किया जा सकता है. यह पृथक् करनेका कार्य प्रज्ञासे ही होता है. प्रत, तप या त्यागादि लले हों, परंतु वे साधन नहीं होते, साधन तो प्रज्ञा ही है.

स्वभावकी महिमासे परपद्यार्थिके प्रति रसबुद्धि-सुजबुद्धि टूट जाती है. स्वभावमें ही रस आता है, दूसरा सज नीरस लगता है. तभी अंतरकी सूक्ष्म संधि ज्ञात होती है. असा नहीं होता कि परमें तीप्र रसि हो और उपयोग अंतरमें प्रज्ञाछैनीका कार्य करे. १८७.

१८७. 'प्रज्ञाछैनीको शुभाशुभ भाव और ज्ञानकी सूक्ष्म अंतःसंधिमें पटकना.' आलाला..! क्या कहते हैं? प्रज्ञाछैन... क्योंकि आत्मा और राग-सूक्ष्म विकल्पके बीचमें संधि है. संधि है-सांध है-दरार है. अक नही लुअे. प्रज्ञाछैनीका श्लोक है, समयसारमें. प्रज्ञाछैनीका श्लोक है. संधी लुई नही, निःसंधि है. भगवान् चैतन्यमूर्ति प्रभु और रागका कण, बीचमें संधि है. आलाला..! समजमें आया? प्रज्ञाछैनी है. उसमें है. आलाला..! कौन-सा आया? प्रज्ञाछैनीको... आलाला..! शुभाशुभ भाव और ज्ञानकी सूक्ष्म अंतःसंधि. संधि है. यह ज्ञानस्वरूप और यह राग. जैसे टोके बीच भिन्नता ही है. भिन्न-भिन्न चीज पडी है. भेदज्ञान जबसे लुआ तबसे भिन्न है. आलाला..!

'उपयोगको बराबर सूक्ष्म करके उन दोनोंकी संधिमें सावधान होकर..' वह विशेष बात है...

(श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)